AMOGHVARTA

ISSN : 2583-3189

संगीत में सौन्दर्य

ORIGINAL ARTICLE

Author
डॉ. सोनी कुमारी,
अतिथि सहायक प्राध्यापिका (संगीत),
एम0आर0एम0, कॉलेज दरभंगा, बिहार, भारत

शोध सार

सौन्दर्य बोध का सम्बन्ध हृदय से है और हृदय शरीर में स्थित है। शरीर जिस भूमि–विशेष से सम्बन्धित होता है, उसी के अनुसार हृदय को रस–ग्रहण की आदत पड़ जाती है। जैसे– जापान देश का करूणाजनक संगीत अफ्रीका देश के व्यक्ति को हास्यरस का आनन्द प्रदान करेगा अथवा अफ्रीका देश के करूण–प्रधान संगीत से जापान देश के व्यक्ति के मन में रौद्र रस का संचार होगा, परन्तु इसका अभिप्राय यह कदापि नहीं कि रस की मूलभूत सृष्टि में कोई अन्तर है।

मुख्य शब्द

संगीत, सौन्दर्य, रस, गायन।

लाल रंग रक्त का प्रतीक है, अतः वह मनुष्य को दिखाई दे अथवा पशु को, उससे 'क्रोध' अथवा उसके अनुगामी 'काम' की उत्पत्ति होगी। लाल रंग शक्ति के समन्वय से शान्ति का उद्‌बोधक बनता है। इसी प्रकार अग्नि के उद्दीपन से शान्ति रूप श्वेत एवं शीतल विभूति की उत्पत्ति है। अग्नि के मूलभूत गुण दाहकत्व का प्रभाव सभी प्राणियों पर समान रूप से पड़ेगा। यह बात अलग है कि कुछ प्राणी उसे अपने प्रतिकुल समझकर दूर भागे और कुछ उसे प्रिय समझकर अपने आगोश में ले लें। ठीक यही बात संगीत कला अथवा नाद सौन्दर्य के मूलभूत गुणों के बारे में लागू होती है।

परिचित ध्वनियों से उत्पन्न रस की सृष्टि अलग बात है और अपरिचित ध्वनियों से उत्पन्न रसोद्रेक दूसरी बात, परन्तु हम यहाँ मूल ध्वनि की चर्चा कर रहें है। ठीक वैसे ही, जैसे कि दूध गाय का हो या ऊँटनी का दोनों में दुग्ध के गुण अवश्य विद्यमान होंगे, किन्तु भावना भेद से वह प्रिय और अप्रिय लगेगा, सुस्वाद और अस्वाद प्रतीत होगा एवं शरीर तथा प्रकृति भेद से उसके गुणों में भी सूक्ष्म परिर्वतन आ जाएगा। फिर भी दुग्ध के मूल गुण अपने स्थान पर ज्यों–के–त्यों रहेंगे। भारतीय संगीत में स्वर–सन्निवेश के द्वारा जिस रस–प्रक्रिया पर विचार किया गया है, वह सार्वदेशिक नही तो शाश्वत् अवश्य है।

संगीत का सौन्दर्य बोध स्वर की उत्पत्ति, उसकी विशेषता, उसके प्रकार, समय, जाति, घनत्व, लय एवं गुण पर आधारित है। प्राचीन आचार्यों ने बड़े परिश्रम से अनुसन्धान किया है कि रस का ठीक–ठीक अभिव्यंजना के लिए किस स्वर का प्रयोग आधार–स्वर के रूप में कब और कहाँ करना चाहिए। महर्षि भरत से लेकर आचार्य शारंगदेव तक लगभग सभी ने अपनी जातियों, पदों, और रागों में उससे सम्बन्ध रस की चर्चा की है। नाद सौन्दर्यजनित आनन्द अगाध है, अनन्त है और उसकी अभिव्यक्ति के साधन भी अनन्त हैं।

संगीत का सौन्दर्य बुद्धि निरपेक्ष है, यह बात कभी नहीं भूलनी चाहिए। अन्यथा न तो संगीतकार आहादकारी संगीत का सृजन कर सकेगा और न श्रोता को उस संगीत से रस उपलब्ध हो सकेगा। समस्त कलाओं में केवल संगीत ही ऐसी कला है, जिसे अपना स्वरूप प्रकट करने के लिए केवल सन्तुलित नाद–बिन्दुओं की अपेक्षा होती है अन्य किसी उपादान की नहीं। एक प्रकार से उसका सौन्दर्य स्वतः सिद्ध हैं, क्योंकि सम्पूर्ण जगत् नादाधीन है। नाद ब्रह्म में कल्पित सम्पूर्ण सृष्टि नादाधीन ही है, इसलिए नाद के आश्रित मनुष्य को सहज ही मुक्ति अथवा मोक्ष उपलब्ध हो सकता है।

जो ज्ञात है वही अज्ञात होकर पुनः ज्ञात होता है, जो शान्त है, वही अशान्त होकर पुनः शान्त होता है और जो सौन्दर्य तत्त्व है, वही असुन्दर होकर सौन्दर्य बोध का कारण बनता है।

सृजन एक सन्धि मात्र है, जो पुरातन को नवीन से और नवीन को पुरातन अथवा पूर्व से जोड़ता है। इसी प्रकार वर्तमान वह सन्धि है, जो भूत को भविष्य से और भविष्य को भूत से जोड़ती है। सौन्दर्य न भूत में है, न वर्तमान में और न भविष्य में, वह तो तीनों में एक रस होकर व्याप्त है।

इसलिए सौन्दर्य में किसी प्रकार का भेद सम्भव नहीं। संगीत का सौन्दर्य व्यक्ति, समाज, सभ्यता और संस्कृति का उत्कर्ष एवं संरक्षण करता है। नाद की विभिन्न अवस्थाएँ प्रतीक के रूप् में अभिव्यंजित होती हैं और उस तत्त्व की ओर संकेत करती हैं, जो मनुष्य का चिर अभीप्सित लक्ष्य है। राग के ढाँचे, राग की शक्ति और राग की आत्मा पर विचार करके जो संगीत का सृजन करेगा, वही कलाकार सौन्दर्य बोध सम्पन्न हो सकता है। संगीत में अंश स्वर के परिवर्तन से आलम्बन, उद्दीपन, और संचारी भावों की सृष्टि होती है तथा उसी से रस उत्पन्न होता है अर्थात् स्थायी स्वर पर आलम्बित, उसके संवादी स्वर द्वारा दीप्त, अनुवादी स्वरों द्वारा अनुभावित और संचारी स्वरों द्वारा परिपोषित सदस्यों की वह चेतना विशेष 'रस' है, जिसकी अनुभूति के समय रजोगुण और तमोगुण से उत्पन्न उनकी राग–द्वेषात्मक ग्रन्थियाँ विगलित हो जाती हैं। संगीत कला की विशेषता यही है कि इसके नाद–सौन्दर्य को किसी शुष्क शब्द, स्पर्श, रूप, जिह्वा–रस, गन्ध, कथ्य अथवा घटना की अपेक्षा नहीं।

शास्त्र में स्थायी स्वरों का रसों में, जो विनियोग किया गया है वह इस प्रकार हैः–

स्थायी स्वर	रस	स्थायी भाव
षड्ज	वीर, अद्भुत, रौद्र	उत्साह, विस्मय, क्रोध
ऋषभ	वीर, अद्भुत, रौद्र	उत्साह, विस्मय, क्रोध
गन्धार	करूण	शोक
मध्यम	श्रृंगार, हास्य	रति, हास
पंचम	श्रंगार, हास्य	रति, हास
धैवत	वीभत्स, भयानक	भय, जुगुप्सा
निषाद	करूण	शोक

संगीत की विभिन्न विधाएँ गायन, वादन,[1] नृत्य में सौन्दर्य का विशेष महत्व है। सौन्दर्यशास्त्र– संवेदनात्मक, भावनात्मक गुण, धर्म और मुल्यों का अध्ययन हैं। संगीत, कला, संस्कृति और प्रकृति अंकन ही सौन्दर्यशास्त्र है। सौन्दर्यशास्त्र वह शास्त्र है जिसमें कलात्मा, कृतियों, रचनाओं आदि से अभिव्यक्त होने वाला अथवा उनमें निहित रहने वाले सौन्दर्य का तात्विक, दार्शनिक और मार्मिक विवेचन होता है।[2] किसी सुन्दर वस्तु को देखकर हमारे मन में जो आनन्दायिनी अनुभूति होती है उसके स्वभाव और स्वरूप का विवेचन तथा जीवन की अन्यान्य अनुभूतियों के साथ उसका समन्वय स्थापित करना इसका मुख्य उद्देश्य होता है। संगीत, साहित्य व सौन्दर्य का ज्ञान व इसकी विवेचना को सौन्दर्य कहते हैं। सौन्दर्यबोध से ही हम सुन्दर वस्तु के महत्व को समझते है। मुंशी प्रेमचंद्र के अनुसार सुन्दरता मनोभावों पर निर्भर करती हैं। सहृदयता भी सौन्दर्य बोध का अनिवार्य तत्व है– अर्थात् कोमलता। जिसका चित जितना अधिक कोमल होता है उसका सौन्दर्य बोध भी उतना ही अधिक होता है। भारतीय संगीत में निहित सौन्दर्य का उद्देश्य प्राणी के अन्दर अवस्थित स्थाई भावों को जगाकर उसे रस मग्न करना ही है। गायन के द्वारा स्थापित भाव को ठीक–ठीक श्रोताओं तक संप्रेषण कलाकार या संगीतकार की सफलता मानी जाती है। यह सफलता ही

संगीत का सौन्दर्य है।

संगीत एक बहुआयामी कला है, जिसमें भौतिक सौन्दर्य के साथ आन्तरिक सौन्दर्य भी शामिल है। संगीतकारों का सुन्दर परिधान वीणाओं आदि वाद्य–यंत्रों की कलात्मक बनावट, नृत्य में रूप सज्जा एवं मर्यादित अंग–संचालन, गायन में पद–लालित्य आदि संगीत के वाह्य सौन्दर्य है, जो प्रेक्षकों को सहज ही अपनी ओर आकर्षित करते हैं परन्तु भावाभिव्यक्ति के धरातल पर संगीत में रागात्मक पदाभिव्यक्ति के धरातल पर संगीत में रागात्मक पदाभिव्यक्ति के मध्य से अनेक भावों का सृजन होता है जिससे सहृदय आनन्दित होते है।[3] सौन्दर्य का अभिप्राय गानेन्द्रिय द्वारा गृहित संवेगों मानव–मन को आनन्द प्रदान करना माना गया हैं। सौन्दर्य पर विचार करने से यह स्पष्ट होता है कि व्यवस्थित घटक तत्वों से परिमाणित एवं संतुलित रचना या कृति ही सौन्दर्य का अवसर प्रदान करता है। सुन्दर की अवधारणा भारतीय वाद्य में चली आ रही है। व्यवहारिक रूप से देखें तो ध्रुपद, ख्याल, ठुमरी, दादरा, टप्पा सभी गान प्रकारों के अपने सौन्दर्य है। प्रथम तो संगीत के द्वारा ही सम्भव हाती है। कितना भी वाद्य सुन्दर हो राग मनोहर हो, श्रोता आग्रही हो, सभी तरह से वातावरण अनुकूल होने पर भी, अगर कलाकार कमजोर है तो सौन्दर्य की अनुभूति नहीं हो सकती है। अतएव संगीत के द्वारा सौन्दर्य स्थापना के वास्ते संगीत के मूल तत्वों पर साधनाजन्य अधिकार प्राप्त करना आवश्यक माना गया है इसलिए तो राग संगीत की साधना में सरगम, पलटों को अलंकार कहा जाता है, जिसकी साधना से गायन–वादन में सौन्दर्यबोधक अलंकरण की स्थापना होती है।

निष्कर्ष

अनुभव की दृष्टि से संगीत के स्वरूप को मुर्त रूप देने के लिए षडज् से लेकर निषाद तक मन्द्र, मध्य तथा तार के स्वरों को विविध आधारों के द्वारा अनेक प्रकार के स्वरों के रूप स्थापित होते हैं जिनका गायन–वादन सदियों से होता आ रहा है। वह संगीत अथवा स्वरावली जिसके गाने और बजाने में किसी भाव विशेष की अनुभूति हो वही राग है। इसे रागात्मक कहा गया हैं जब तक इसके द्वारा आनन्द की अनुभूति नही होती है। संगीत के अन्तर्गत निहित भाव को पहले कलाकार स्वयं अनुभव करता है और अपने इसी भाव को प्रस्तुति के माध्यम से श्रोताओं तक पहुँचाता है। केवल किसी राग के स्वरों को यथावत दुहराने से ही प्रदर्शन आकर्षक नही बनता। जबतक यह प्रभावषाली नहीं बनता है तबतक इसके द्वारा आनन्द की प्राप्ति नहीं हो सकती। संगीत में सौन्दर्य पूर्णरूपेण तभी प्रस्फुटित होता है, जब कलाकार तथा श्रोता के मनोवृति का संयोग संभव है।[4] इसके लिए सर्वप्रथम स्वर, ताल शब्द इन तीनों पर विषेष ध्यान रखना पड़ता है। पहले चरण में स्वरों का अभ्यास अत्यंत आवश्यक है जिससे किसी भी क्षण कोई स्वर–उच्चारण अपने निष्चित अनुपात पर उच्चारित हो तथा राग उच्चारण में उसके सभी धारक स्वर अपने अनुपात में स्थापित हो अर्थात उच्चारित किए जाए। द्वितीय चरण में ताल एवं लय पर नियंत्रण अत्यंत आवश्यक है जिससे गीत की मर्यादा लय सीमा के अन्तर्गत रहे। तृतीय चरण अर्थात् भाव पर नियंत्रण होना आवश्यक माना गया है जिसके द्वारा शब्दों का उच्चारण तथा गीत के अन्तर्निहित भावों को व्यक्त करने की क्षमता होना आवश्यक है। इन तीनों तत्वों पर नियंत्रण होना किसी भी सफल गायक के लिए आवश्यक माना गया है। इसके पश्चात् ही गायन के द्वारा आनन्द की प्राप्ति हो सकती है कलात्मकता ही संगीत का मूल आधार है। संगीत में निहित सौन्दर्य का उद्देश्य प्राणी के अन्दर अवस्थित स्थाई भावों को जगाकर उसे रसमग्न कर देना ही है। गायन के द्वारा स्थापित भाव का ठीक–ठीक श्रोताओं तक संप्रेषण कलाकार या संगीतकार की सफलता मानी जाती है। यह सफलता ही संगीत का सौन्दर्य कहलाता है।

संदर्भ सूची

1. ''वसंत'' प्रभुलाल गर्ग, *संगीत विशारद*– पृष्ठ सं०– 33
2. श्रीवास्तव, प्रो० हरिश्चन्द्र, *संगीत निबन्ध*– पृष्ठ सं०– 88
3. महाजन, डॉ० अनुपम, *भारतीय शास्त्रीय संगीत एवं सौन्दर्यशास्त्र,* हरियाणा साहित्य अकादमी, चन्डीगढ़, 1993 ई०
4. श्रीवास्तव, प्रो० हरिश्चन्द्र, *संगीत निबन्ध*– पृष्ठ सं०– 84

––==00==––